सूथनी : एक बहुपयोगी एवं धार्मिक महत्व वाला कन्द

कैलाश चन्द्र भट्ट, रनबीर सिंह राठी एवं सुधीर पाल अहलावत

"आज भी हमारे किसानों के पास आर्थिक महत्व वाले पौधे, फसलें, किस्में विद्यमान हैं, जिनके बहुमूल्य जननद्रव्यों के माध्यम से स्थानीय जलवायु व भौगोलिक संरचना के अनुकूल व आधार पर उच्च पैदावार वाली किस्में विकसित की जा सकती हैं जिससे भविष्य में किसी प्रकार से खाद्यान्न की कमी न हो तथा संतुलित भोजन भी प्राप्त हो। अतः यहाँ पर इसी प्रकार के पौधे सूथनी के कन्दों की विशेषतायें व गुणों के बारे में अवगत कराया गया है। वर्तमान में कई व्यापारिक व उच्च पैदावार वाली फसलों के आ जाने से किसानों का रूझान इस प्रकार के स्थानीय गुणकारी फसलों की खेती करने की ओर कम हुआ है, यही कारण है कि सूथनी को यदि किसान उगा रहे हैं तो मात्र धार्मिक भावनाओं की पूर्ति हेतु। अतः इस प्रकार के बहुमूल्य जननद्रव्यों को एकत्र करके उनको संरक्षण दिया जाए एवं उनके उपयोग को भी अधिक से अधिक बढावा देने की आवश्यकता है।"

परिचय

जनसंख्या का निरन्तर बढ़ना तथा प्राकृतिक संसाधानों का तीव्रगति से क्षरण होना इस बात का संकेत देता है कि समय आ गया है ऐसी कृषि जनित फसलों व आर्थिक महत्व वाले पौधों की खोज करने का, जो दैनिक खाद्य पदार्थों की आपूर्ति करने में एवं कुपोषण की समस्या को दूर करने में सक्षम हों। हमारे देश की भौगोलिक संरचना व इसकी विशिष्ट जलवायु इस प्रकार की है कि कई प्रकार की पादप प्रजातियों का यहाँ होने का आभास कराती है, आज भी कई ऐसे पौधे हैं जिनका अस्तित्व खतरे में है, लेकिन स्थानीय जन–मानस में धार्मिक भावनाओं के विद्यमान होने के कारण अल्प मात्रा में इनकी खेती कर संरक्षित किया जा रहा है, सूथनी : डायस्कोरिया एस्कुलेन्टा (लौर) बुरकिल, इसी प्रकार का एक कन्दीय फसल है, जो भारत के उत्तर पूर्व, पूर्व व दक्षिण के राज्यों में उगायी जाती है, यह डायस्कोरिऐसी कुल की एक प्रमुख प्रजाति है। विश्व में जीनस डायस्कोरिया की लगभग 350–400 प्रजातियाँ पायी जाती है जिनके कन्दों को खाने के लिए उपयोग में लाया जाता है।

कन्दीय फसलें पौराणिक काल से ही खाद्य आपूर्ति की प्रमुख स्रोत रही हैं जिनमें पौष्टिक पदार्थ प्रचुर मात्रा में विद्यमान होते हैं। सूथनी के कन्द में लगभग 80 प्रतिशत स्टार्च, 12 प्रतिशत प्रोटीन तथा कार्बोहाईड्रेट होती है और इसे विटामिन बी का एक उत्तम स्रोत भी माना जाता है। परम्परागत औषधि के रूप में इसके कन्द को गठिया या जोडों के दर्द व मूत्र जनित रोगों और जननांग सम्बन्धित रोगों व फोड़े–फून्सीयों में उपयोग किया जाता है। इसके कन्दों में डायोसजेनिन नामक रसायन होता है जिसे प्राकृतिक स्टेरायड में परिवर्तित कर औषधि के रूप में प्रयोग किया जाता है, फिनालिक व फ्लेवनोयड कम्पाउण्डस का इसके कन्द में उपस्थित होने के कारण कन्दों को एन्टीआक्सीडेंट की तरह भी इस्तेमाल किया जाता है। इसके कन्दों को सुखा कर बारीक चूर्ण बना लिया जाता है तथा चूर्ण पनीर को ठोस बनाने में इस्तेमाल किया जाता है। सूथनी के कन्दों में कई विशेषतायें व गुण होने के बावजूद आज भी यह अल्पप्रयुक्त फसलों की श्रेणी में आती है। वर्तमान में कई व्यापारिक व उच्च पैदावार वाली फसलों के आ जाने से किसानों का रूझान स्थानीय गुणकारी फसलों की खेती करने की ओर कम हुआ है, यही कारण है कि सूथनी को यदि किसान उगा रहे हैं तो मात्र धार्मिक भावनाओं की पूर्ति के लिए, जबकि किसानों को चाहिए की ऐसी फसलों को उगायें जो कि संभावित प्राकृतिक आपदाओं को झेले व खाद्य आपूर्ति को पूर्ण करने में सक्षम हो साथ ही धार्मिक भावनाओं को भी जीवित रखने में कामयाब हों।

भा॰ कृ॰ अनु॰ परि॰, राष्ट्रीय पादप आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, नई दिल्ली – 110012

स्थानीय नाम / प्रचलित नाम

विश्व में इसको एशियाटिक याम, चाइनीज पोटेटो चाइनीज याम, पोटेटो याम, लेसर याम, लेसर एशियाटिक याम आदि नामों से जाना जाता है जबकि भारतवर्ष में इसे स्थानीय भाषा जैसे की तमिल में कोडि–केलेगू, कोडिकिलांग भूसिलमवटसी किलांशू, तेलगू में सिलाकाडोम; बंगाली में गोड–आलू / सुसनी आल / सुथनी राठी / कंगार व नेपाली भाषा में सुथनी तरूल आदि नामों से जाना जाता है।

वानस्पतिक पहचान

यह एक वर्षीय कांटे युक्त शाकीय लता है, इसकी जंगली किस्म के कन्द कंटीले होते है जबकि उगायी जाने वाली किस्म में कांटे कम होते हैं (चित्र संख्या 1.क)। इसके कन्द मिट्टी की सतह से लगभग 1 मीटर जमीन के अन्दर लगते हैं, जो 5–20 की संख्या में 5–50 सें.मी. तक लम्बे स्टोलन पर लगे होते हैं; परिपक्व कन्द बेलनाकार होते है जो कि आलू की तरह दिखते हैं लेकिन कभी–कभी कन्द का अग्र भाग पिण्डलीन के आकार की भांति छोटे–छोटे प्रकन्दों मे भी बंट जाते हैं; इनका आकार 8–20 x 2–5 सेंमी. होता है (चित्र संख्या 1. ख), कन्द का छिल्का पतला, भूरा व हल्के भूरे रंग का होता है, तथा आंतरिक भाग सफेद होता है, इसका तना बेलनाकार, वामवर्ती होकर चढ़ता है, तने का निचला भाग कांटेदार परन्तु ऊपरी भाग पर कम कांटे होते हैं। इसमें बुलबिल्स अनुपस्थित होते हैं, पत्तियां लगभग गोल, हृदयाकार, 10–15 x 10.–17 सेंमी अग्रभाग तीखा तथा शिराओं की संख्या 9–13 के लगभग होती है, पत्ती का वृन्त 11.5 सेंमी लम्बा होता है तथा इसके आधार भाग पर 2–4 कांटे होते हैं। पुष्प एकलिंगीय व हरे रंग के होते हैं। अन्य प्रजातियों के पुष्पों की अपेक्षा आकार में बडे होते हैं। फल एक उभरा हुआ कैपसूल जैसा होता है, जो 27 x 12 मिमी के आकार का होता है, बीज के चारों ओर पंखनुमा आकृति होती है।

उत्पत्ति स्थान

सूथनी डायस्कोरिया प्रजातियों में सबसे पुरानी है जिसकी उत्पत्ति का केन्द्र थाइलैण्ड, भारत, वियतनाम, पपुआ न्यू गुआना, फिलिपींस व इन्डो चाइना में हुई मानी जाती है। यह उत्तरीय भारत, वर्मा तथा न्यू ग्वीनिया में जंगलीय किस्म के रूप में भी उगती है। दक्षिण चीन में इस प्रजाति का डोमेस्टिकेशन एक मुख्य फसल के रूप मे लगभग दूसरी व तीसरी

सदी से आरम्भ हुआ था तभी से इसका उपयोग खाने में किया जा रहा है।

खेती व आवास स्थान

यह प्रायः आर्द्र व उप आर्द्र कटिबंध में उगने वाला पौधा है जहाँ प्रतिवर्ष 875–1750 मिमी. वर्षा समान मात्रा में होती है, दो माह से अधिक के सूखे की स्थिति में पौधे मर जाते है। इसके उत्तम विकास के लिए 22.7° से. तापमान की आवश्यकता होती है परन्तु तापमान 35° से. या इससे अधिक होने पर इस पौधे में फुटाव नहीं हो पाता। हालांकि यह निम्न ऊँचाई वाले क्षेत्रों में उगने वाली फसल है लेकिन 9000 मी. की ऊँचाई वाले क्षेत्रों में भी इसे आसानी से उगाया जा सकता है। इसके कन्दों की संख्या बढ़ाने के लिए अल्प दिन अवधि वाली परिस्थितियाँ उचित मानी जाती हैं, इसको उगाने के लिए 5.5–6.5 पी एच वाली भूमि सर्वोत्तम मानी जाती है।

बलुई मिट्टी इसको उगाने के लिए उचित नहीं है गोबर व आर्गेनिक खाद इस पौधे के लिए उचित मानी गयी है। इसके कन्दों का आकार छोटा होने के कारण आधुनिक कृषि उपकरणों का प्रयोग कर आसानी से इसकी खेती की जा सकती है। दक्षिण–पूर्व एशिया में इसे अत्यधिक मात्रा में उगाया जाता है जहाँ यह अन्य प्रजातियों के मुकाबले तीसरी सबसे ज्यादा उत्पादन देने व उपयोग में लायी जाने वाली फसल है लगभग 50–80 ग्रा भार वाले कन्द को बुआई के लिए उचित माना जाता है इसके कन्दों को मेढ़ों या गड्डों में जमीन से 8–12 सेमी नीचे 90 x 90 सेमी की दूरी पर लगाया जाता है। पौधों के मध्य लगभग 1 मी की दूरी होनी चाहिए। प्रति हेक्टेयर के लिए लगभग 2000 किग्रा बीज (कन्दों) की आवश्यकता पड़ती है। लगभग 8–9 महीने में कन्द परिपक्व व खोदने के लिए तैयार हो जाते है। यदि सूथनी को एकल फसल के रूप में उगाया जाये तो इसकी पैदावार अच्छी होती है और 20–40 टन प्रति हेक्टेयर तक पैदावार हो सकती है। इसके कन्दो में प्रचुर मात्रा में पौष्टिक तत्व होते हैं जो इस प्रकार से हैः 67–81 प्रतिशत पानी; 1.29–1.87 प्रतिशत प्रोटीन; 0.04 – 0.29 प्रतिशत वसा; 17–25 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट; तथा 0.18–1.51 प्रतिशत फाइवर कार्बोहाइड्रेट में मुख्यता स्टार्च होता है लेकिन 7–11 प्रतिशत शुगर होती है जो खाने पर मिठास का आभास दिलाती है।

उपयोग

इसके कन्दों को पानी से धोकर साफ किया जाता है तथा आलू की तरह आग में पकाकर,

(क)

(ख)

चित्र संख्या 1: (क) सूथनी का एक पौधा एवं (ख) ताजे कन्द

उबालकर व तलकर खाया जाता है, यह छीलकर कच्चा भी खाया जाता है, स्वाद में मिठास लिए होता है, यह मान्यता है कि इसके कन्दों को बिना धुले व पकाये खाये जाने पर मुंह मे छाले पड़ सकते हैं, खुजली हो सकती है तथा पेट में घाव भी हो सकते हैं।

धार्मिक महत्व

ऐसी मान्यताऐं हैं कि कई प्रकार के पेड़–पौधे, कन्द, फल–फूल आदि तथा शादियों, धार्मिक पर्वों व उत्सवों के अवसर पर पूजा–पाठ में उपयोग किये जाते रहे हैं, इसी प्रकार से असम के हैलाकाण्डी जिले में निवास करने वाले ग्रामीण जो कि सम्भवतः बिहार, पश्चिम बंगाल आदि राज्यों से आकर यहाँ बस गये हैं परन्तु आज भी अपनी धार्मिक, सांस्कृतिक व स्थानीय रीति–रिवाजों का अनुसरण कर धार्मिक पर्वों पर स्थानीय फल–फूल, कन्दों आदि का इस्तेमाल कर रहे हैं; यही कारण है कि सूथनी के कन्दों का उपयोग यहाँ के निवासी 'छठ' पूजा जो कि बिहार, बंगाल, झारखण्ड, छत्तीसगढ, मध्य प्रदेश, ओड़िशा व पूर्वी उत्तर प्रदेश में हर वर्ष मनायी जाती है, के अवसर पर प्रसाद के रूप में बांटते हैं। छठ पूजा दीपावली के 6 दिन बाद मनायी जाती है तथा छठ पूजा के अलावा नवम्बर माह की एकादशी पर भी इसे प्रसाद के रूप में बांटा व खाया जाता है। स्थानीय बाजारों में इस दौरान सूथनी के कन्द लगभग रुपये 60–70 प्रति किलो के भाव से बिकते हैं, छठ पूजा व एकादशी व्रत के उपरान्त भी यह बाजार में बिकता रहता है, प्रसाद अथवा सब्जी के रूप में उपयोग करने से पहले इसके कन्दों को पानी से साफ करके उबाला जाता है तथा छीलने के बाद छोटे–छोटे टुकड़े कर दिये जाते हैं तथा पूजा सम्पन्न होने के उपरान्त महिलायें इसे प्रसाद के रूप में वितरित कर देती हैं। इसी प्रकार की धार्मिक भावना का परिचय उत्तराखण्ड में भी मिलता है, उत्तराखण्ड में सूथनी की अन्य प्रजातियां जेसे कि डायस्कोरिया बल्बीफेरा (गेंठी) व डायस्कोरिया ग्लेब्रा (तैडू/तरूड़) के कन्दों को शिवरात्रि के अवसर पर खोदा जाता है तथा उबालकर सब्जी बनाते है और सर्वप्रथम शिवरात्रि के दिन भगवान शिव को भोग लगाते हैं और उसके बाद प्रसाद के रूप में खाते हैं।

निष्कर्ष

अब समय आ चुका है कि हमारे किसानों को सूथनी अथवा ऐसे अन्य पौधें, फसलों व किस्मों को उगाना चाहिये जो कि स्थानीय जलवायु के अनुकूल हों तथा संतुलित भोजन प्रदान करें। जो कि संभावित प्राकृतिक आपदाओं को झेले व खाद्य आपूर्ति को पूर्ण करने में सक्षम हो साथ ही धार्मिक भावनाओं को भी जीवित रखने में सक्षम हों। इस प्रकार की फसलों की उच्च पैदावार वाली किस्में विकसित की जाएँ एवं उनके उपयोगों को भी बढावा दिया जाना चाहिये। इनके जननद्रव्यों को एकत्र करके उनको संरक्षण दिया जाए, ताकि भविष्य में इनको उपयोग लाया जा सके।